भारतीय सिनेमा पर इप्टा का प्रभाव
IMPACT OF IPTA ON INDIAN CINEMA

लघु शोध सारांश

बाबासाहेब भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय से
जनसंचार एवं पत्रकारिता विभाग विषय
में एम० फिल० उपाधि हेतु प्रस्तुत
मास्टर ऑफ फिलॉसफी (एम० फिल०)

शोधार्थी

आशुतोष कुमार राय

इनरोलमेण्ट न. 100/19

शोध निर्देशक

प्रोफेसर गोविन्द जी पाण्डेय

BABASAHEB BHIMRAO AMBEDKAR UNIVERSITY
LUCKNOW
प्रज्ञा शील करुणा
ESTABLISHED 1996

जनसंचार एवं पत्रकारिता विभाग
बाबासाहेब भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय
(केन्द्रीय विश्वविद्यालय)
विद्या विहार, रायबरेली रोड लखनऊ (उ०प्र०)

2020

शोध-सार

अध्याय 1,सजग अभिव्यक्ति के रूप में सिनेमा

सिनेमा आधुनिक जनसंस्कृति का वह माध्यम है जो सभी तत्कालीन कलाओं को सार्वभौमिकता प्रदान कर उसे जनसुलभ बनाता है।'किसी भी अन्य माध्यम की अपेक्षा सिनेमा न सिर्फ हमारा मनोरंजन करता है, बल्कि इस दुनिया को समझने की शक्ति और समझ प्रदान करता है

सिनेमा का सफर भारत में एक सदी पुराना है। लगभग इतनी ही उम्र विश्व सिनेमा का भी है। ऐसे में सिनेमा ने अपने लिए समय–समय पर नए लिबास तवील किये हैं और पुरानी पोशाकों को तहखाने भेज दिया है। इसके लिए एक शब्द का प्रचलन होता है– सिनेमा मूवमेंट। समय के साथ सिनेमा के अंदर कई तरह के आंदोलनों ने उसकी रुपरेखा, भाषा, कथ्य और तकनीकी में फेरबदल करने का प्रयास किया है। यह आन्दोलन या तो सिनेमा ने वैश्विक राजनीति से हासिल किया है या राष्ट्रीय स्तर पर चलने वाले विमर्शों से। इन आंदोलनों के प्रमुख घटक हैं राजनैतिक चिन्तन, सामाजिक तानाबाना, सांस्कृतिक आग्रह और आर्थिक उन्नति। प्रस्तुत अध्ययन भारतीय जन नाट्य मंच द्वारा भारतीय सिनेमा पर छोड़े गये प्रभावों के विश्लेष्ण पर आधारित है।

विश्व सिनेमा के शुरुआती आन्दोलन

सामाजिक सरोकारों के प्रति सिनेमा हमेशा से मुखर रहा है। इसकी शुरुआत यूरोपीय देशों के राजनैतिक–सांस्कृतिक उठापटक से शुरू हुई। यूरोप के निर्देशकों ने सिनेमा को मानवीय अभिव्यक्ति का व्याकरण प्रथम विश्व के युद्ध के बाद से ही पढ़ाना शुरू कर दिया। जिसमें जर्मनी का एक्स्प्रेसनिज्म, इटली का नव यथार्थवाद, रूस का यथार्थवाद महत्वपूर्ण माने गये हैं। इस दौर के निर्देशकों में जॉर्ज मैलिस, विक्टोरिया द सीका, पुदवोकिन ने सिनेमा के इन अभिव्यक्ति परक संवेगों से दुनिया को रूबरू कराया।

भारतीय सिनेमा का संक्षिप्त परिचय

सर्वविदित है की भारतीय सिनेमा दादा साहेब फाल्के के 'राजा हरिश्चंद्र' के साथ शुरू होता है। फाल्के बम्बई के फोटोग्राफर, पेंटर, जादूगर थे। उन्होंने सिनेमा बनाने का निर्णय 'लाइफ आफ क्राइस्ट' देखने के बाद लिया। फिल्म देखने के बाद वह लन्दन जाकर सम्बन्धित फिल्म तकनीकियों को सीखने के बाद बम्बई वापस आए। 1913 भारतीय सिनेमा के लिए ऐतिहासिक दिन साबित हुआ। इस तरह भारतीय सिनेमा की शुरुआत हुई।1913 से 1933 तक का भारतीय सिनेमा का सफर सवाक् नहीं था। इस दौर की सभी फिल्मों में ध्वनियों का आभाव रहा। ऐसा उस दौर के तकनीकी अक्षमता का परिणाम था। देश की दशा सिनेमा के लिए पूरी तरह तैयार नहीं थी। औपनिवेशिक साम्राज्य की नीतियों के कारण भी शुरुआती भारतीय भाषाई सिनेमा का कथावस्तु पौराणिक ही रहा। ब्रिटिश साम्राज्य भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम को सिनेमा के माध्यम से आम जनता तक नहीं पहुंचने देना चाहती थी। 1917 में युरोपियन असोसिएशन ने फिल्म द सैर्पेतेन डांस को लेकर भारतीय सरकार को इस तरह की चेतावनी भी दी।

ध्ययन इतिहास और समाजशास्त्र जैसे विषयों में होता रहा है। मीडिया के अध्ययन से जुड़ी हुई संस्थाओं ने भी सिनेमा को अपना एक महत्वपूर्ण विषय बनाया है। इसलिए सिनेमा में शोध की प्रवृत्तियां अंतरविषयी हैं। प्रस्तुत शोध यह देखने का प्रयास है कि भारतीय सिनेमा पर पड़ने वाले विभिन्न सामजिक–राजनैतिक–सांस्कृतिक–आर्थिक तब्दीलियों में इप्टा किस तरह का योगदान देने में सफल रहा।

वर्ष 2015 में फिल्म अध्ययन विभाग, विदेशी भाषा विश्वविद्यालय, हैदराबाद के शोधार्थी विनायक भट्टाचार्य ने अपने शोध कार्य 'द लेफ्ट एनकाउंटर प्रोग्रेसिव पॉलिटिक्स ऐंड इंडियन सिनेमा 1950' में यह देखने का प्रयास किया है कि किस तरह इप्टा द्वारा निर्मित फिल्मों ने सामजिक यथार्थ को भारतीय सिनेमा का अंतर विषय बनाया। समूचा शोध–कार्य इप्टा द्वारा बनाई गई धरती के लाल (1946), नीचा नगर (1946) और चिन्नामुल (1950) पर आधारित हैं। भट्टाचार्य ने यह भी देखने की कोशिश की है कि लेफ्ट एनकाउंटर से पहले भारतीय सिनेमा का क्रियान्वयन किन वर्गों के हाथों में था, जिसके कारण भारतीय सिनेमा में प्रचलित धारणाएं एक विशेष वर्ग की प्रतिनिधि थीं। भट्टाचार्य ने अपने शोध–कार्य में इसे समाज को एक सुविधाभोगी सम्पन्न तबका बताया है।

भारतीय सिनेमा पर नव यथार्थवाद का भी व्यापक प्रभाव रहा है। फासिस्ट इटली के समय वहां के निर्देशकों ने अनप्रोफेशनल अभिनेताओं, सामाजिक यथार्थ को उसी लोकेशन पर सूट करके बैसिकिल थीव्स जैसी फिल्में बनाईं, जो द्वितीय विश्व युद्ध के भग्नावशेषों को समग्रता से दर्शकों के सामने रख रही थीं। इस प्रकार के नव यथार्थवादी आंदोलन का भारतीय सिनेमा पर भी त्वरित असर हुआ। इसको देखने का प्रयास दिल्ली विश्वविद्यालय के शोध छात्र मनोजशर्मा ने किया है। अपने शोध कार्य 'नियो रियलिज्म ऐंड इंडियन सिनेमा' के माध्यम से भारतीय सिनेमा पर इटैलियन यथार्थवादी फिल्मों के प्रभाव की व्याख्या करते हुए वह इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि नव यथार्थवाद ने भारतीय सिनेमा के माध्यम से ऐसे विषयों को उठाने में सफलता अर्जित की है जो उससे पहले भारतीय सिनेमा में नदारद थी।

भीष्म साहनी पर हरियश राय का आलेख बताता है किस–किस प्रकार इप्टा के कलाकारों ने लोक मानस के चित्त पर अपनी अमिट छाप छोड़ी। अपनी स्थापना के दो वर्षों में ही इप्टा ने पुरे देश में अपना विस्तार किया। 1945 में पूरन चंद जोशी ने इप्टा की गतिविधियों पर टिप्पणी करते हुए कहा, 'मैनें मुंबई और कोलकाता के जन नाट्य संघ के जन संगीत और जन नृत्यों को देखकर मध्यवर्ग के हर विचार के लोगों को खुश होते देखा है। देश के इस सांस्कृतिक नवजागरण की सभी प्रशंसा करते हैं किन्तु यह बहुत ही कम लोग जानते हैं कि यह लहर किसान आन्दोलन के गर्भ से उठी है।

शोध का महत्व

भारतीय सिनेमा ने सौ वर्षों का अपना सफर पूरा कर लिया है। इस सफर में कई तरह के परिवर्तन दृष्टिगोचर होते हैं। आधुनिक भारतीय सिनेमा जिस मुकाम पर है उसके प्रमुख चरणों के विश्लेषण का प्रयास शोधकर्ताओं ने किया है। इप्टा उन प्रमुख चरणों में से एक है। भारतीय सिनेमा से इप्टा के कलाकारों के जुड़ाव को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है। चौथे और पांचवे दशक में अपने उरूज पर रहे इस आन्दोलन द्वारा उठाए गए प्रश्न आज भी भारतीय सिनेमा में परिलक्षित होते हैं। कला की सार्थकता और उस रूप में सिनेमा का

सामाजिक महत्व आज भी एक महत्वपूर्ण विमर्श है, जिसे हाल–फिलहाल के महत्वपूर्ण निर्माता–निर्देशकों द्वारा हल करने का प्रयास किया जाता है।

पूँजी और प्रचार आधारित सिनेमा से इतर भी एक सिनेमा हमेशा से विश्व के हर एक दर्शक वर्ग में प्रचलित रही है, जिसे लोगों का सिनेमा या वैकल्पिक सिनेमा के नाम से जाना जाता है। इप्टा अपने गठन के समय इसी सिनेमा की बात कर रहा था। आज के इस दौर में जहाँ पूँजी और प्रचार को ही संदेश माना जा रहा है। संसाधनों पर या और जोर देकर कहा जाए तो अभिव्यक्ति के संसाधनों पर कुछ प्रमुख घरानों का कब्जा हो चुका है। इप्टा जैसे आन्दोलन उदाहरण और प्रेरणा के रूप में हमेशा सामने आते रहेंगे।

शोध का उदेश्य

भारतीय सिनेमा पर इंडियन पीपुल्स थियेटर असोसिएशन के प्रत्यक्ष और परोक्ष प्रभावों का विश्लेषण ही शोध का मुख्य उद्देश्य है। जैसा कि उपरोक्त रूप से वर्णित है कि इप्टा कला की प्रासंगिकता को समाज से जोड़कर देखने का पक्षधर था। उसके मूल्य सांस्कृतिक और सामाजिक रूप से स्थूल बन चुकी विषमताओं को दूर करने के साथ एक समतामूलक समाज की कल्पना में निहित थी। यह शोध कार्य उन सभी महत्वपूर्ण विषयों के सिलसिलेवार अवलोकन पर आधारित है, जिसे इप्टा ने उठाया और फिर भारतीय सिनेमा ने विधिवत आत्मसात किया। साथ ही इप्टा के गठन से पूर्व भारतीय सिनेमा की प्रचलित परिपाटी में निहित विषय क्या थे? इसका विस्तृत अन्वेषणात्मक अध्ययन ही शोध का मुख्य उद्देश्य है।

शोध के प्रश्न

इप्टा के कलाकारों ने लम्बे समय तक भारतीय सिनेमा में अपनी सेवाएं निर्देशक, अभिनेता, गीतकार, पटकथा लेखक के रूप में दीं, इसलिए इस शोध कार्य के प्रमुख प्रश्न निम्नांकित हैं–

1. इप्टा के गठन से पूर्व भारतीय सिनेमा का प्रमुख स्वर क्या था?

2. इप्टा के गठन के बाद भारतीय सिनेमा में किन विमर्शों का उभार देखा गया?

3. इप्टा ने भारतीय सिनेमा में विषयगत बदलावों के इतर और किस तरीके के परिवर्तन किए?

4. अपने संगठनात्मक मूल्यों को भारतीय सिनेमा में स्थापित कराने में इप्टा किस हद तक सफल रहा?

शोध प्रविधि

शोध की प्रकृति विवरणात्मक और तुलनात्मक है, जो इप्टा के गठन से पूर्व के सिनेमा का एक विवरणात्मक अध्ययन उसके गठन के बाद से सिनेमा से तुलनात्मक रूप से प्रस्तुत कर रहा है, जिसकी प्रवृत्ति अपने रूप में आलोचनात्मक है। साथ ही अपने निष्कर्ष के लिए चौथे और पांचवे दशक की प्रमुख पांच फिल्मों के विषयवस्तु विश्लेषण पर आधारित है। ये चार फिल्में हैं– धरती के लाल (ख्वाजा अहमद अब्बास), 'दो बीघा जमीन' (विमल राय–इप्टा से संबद्धता), नीचा नगर, (चेतन आनंद–इप्टा से संबद्धता), 'प्यासा' (गुरु दत्त) और 'जागते रहो' (शम्भू मित्र–इप्टा से संबद्धता)। पांचो फिल्मों और फिल्मों के निर्देशक प्रत्यक्ष रूप से इप्टा से जुड़े रहे हैं। वहीं गुरु दत्त और राज कपूर के बिना पांचवें दशक की कमर्शियल और आर्ट फिल्मों की कल्पना संभव नहीं है। चारों फिल्मों में निर्देशक, पटकथा लेखक, संगीतकार, गीतकार किसी न किसी रूप में इप्टा के कलाकारों की भूमिका के कारण इन फिल्मों के चयन को प्राथमिकता दी गई है।

उपरोक्त चारों फिल्मों को राष्ट्रीय–अंतरराष्ट्रीय मंचों पर काफी सराहा गया है। इसके साथ ही इस शोध के माध्यम से यह भी देखने का प्रयास किया गया है कि इप्टा के गठन से पूर्व

भारतीय सिनेमा में स्थापित प्रमुख विषय क्या रहे हैं? इन विषयों को फिल्म के द्वारा किन प्रेरणाओं के तहत उठाया जा रहा था? इनका सिलसिलेवार विश्लेषण शोध के दूसरे अध्याय में किया गया है।

प्रस्तुत शोध का तीसरा अध्याय स्वतंत्रता के बाद भारतीय सिनेमा द्वारा उठाए जा रहे विषयों पर केन्द्रित है। साथ ही वहां यह भी देखने का प्रयास किया गया है कि उन विषयों को भारतीय सिनेमा में स्थापना के प्रमुख राजनैतिक–सामाजिक कारक कौन से रहे हैं? अथवा वे कौन से मूल्य हैं जिन्हें भारतीय सिनेमा ने स्वतंत्रता के बाद प्रमुखता से उठाया? अर्थात भारतीय सिनेमा स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद किस तरह अपने पिछले दशकों से भिन्न है? इनके विश्लेषण के बाद भारतीय सिनेमा पर इप्टा के कलाकारों द्वारा किए गये हस्तक्षेप और लाए गए परिवर्तन को चौथे अध्याय में देखने का प्रयास किया गया है। जहाँ पांचवें दशक की प्रमुख फिल्मों के माध्यम से उस परिवर्तन अथवा प्रभाव को स्थापित करने का प्रयास होगा।

अध्याय 2 :इप्टा के गठन से पूर्व भारतीय सिनेमा का मुख्य स्वर

अपने प्रारम्भ में भारतीय सिनेमा सीमित संसाधनो, ज्ञान के अभाव और अंग्रेजी हुकूमत के कारण कला के रुप में अपनी पहचान बनाने के लिए संघर्षरत रहा। फाल्के और उनके बाद के निर्देशकों ने सिनेमा की अवधारणा को सबसे पहले पौराणिकता और राष्ट्रीयता के साथ जोड़ने में सफलता अर्जित की। वहीं तीसरे दशक के सिनेमा ने इसे सामाजिक और सांस्कृतिक मोर्चे पर उकेरा। औपनिवेशिक सरकार ने प्रेस के समानांतर सिनेमा को भी अंग्रेजी हुकूमत के लिए खतरनाक माना। फिर भी भारतीय निर्देशकों ने अभिव्यक्ति के खतरे उठाए और बहुआयामी सिनेमा का निर्माण कर भारतीय सिनेमा की आधारशिला को मजबूती प्रदान की।

जहां दूसरे दशक का सिनेमा पौराणिकता और बहुसंख्यक हिंदुओं के नायकों, देवी–देवताओं के चल चित्रण पर आधारित था तो वहीं तीसरे दशक में सिनेमा ने सामाजिक यथार्थ का चित्रण रोचक तरीके से करके दुनिया में ख्याति अर्जित की। एक देश के रूप में अपनी स्वतंत्रता के लिए संघर्षरत इस देश को भारतीय सिनेमा ने इसके सांस्कृतिक चेतना को रुपहले पर्दे पर जीवित कर संघर्ष के लिए प्रेरित करने का प्रयास किया तो दूसरी तरफ इस देश मे व्याप्त

सामजिक कुरीतियों और रुढ़ियों की जमकर आलोचना भी की। इस तरह से देखने पर भारतीय सिनेमा का तीसरा दशक व्यक्तिगत सिनेमा से लेकर सामूहिक सिनेमा तक अपनी यात्रा के लिए जाना जाएगा। जहां व्यक्तिगत सिनेमा का अर्थ है, निर्देशक और उसके एकल प्रयास से निर्मित सिनेमा। वहीं सामूहिक सिनेमा से तात्पर्य है स्टूडियों में तैयार सिनेमा जो विभिन्न व्यक्तियों के नियोजन से निर्मित हो रहा था।

इप्टा के गठन से पूर्व भारतीय सिनेमा गीत–संगीत के प्रादुर्भाव के लिए भी जाना जाएगा। साथ ही इस दौर में हिंदी–उर्दू स्फीयर में रचे जा रहे साहित्य से भी प्रथम परिचय के रूप में इसका अवलोकन किया जा सकता है। संगीत की उपस्थिति के कारण सिनेमा का प्रचार गानों के माध्यम से दूर–दराज तक आसनीं से होने लगा इसलिए तीसरे दशक के सिनेमा को सिनेमा उद्योग और पूंजी के निर्माण और लाभ के उद्देश्य से फिल्म निर्माण के रूप में भी देखा जाना चाहिए।

अध्याय 3,सांस्कृतिक आन्दोलन के रूप में इप्टा का उदघोष

प्रलेस की स्थापना देश भर के साहित्यकारों के अंदर औपनिवेशिक सरकार के उन्मूलन के साथ सामाजिक रूप से अकड़ी भारतीयता को झकझोर देने के लिए की गई। जो यथार्थ की अभिव्यक्ति पर आधारित थी और सच के साथ खड़े होने का आह्वाहन कर रही थी। इसने देश के सभी प्रबुद्ध साहित्यकारों को एक मंच पर लाकर साहित्य को समाज से जोड़ने पर बल दिया। समाजवादी और शोषण से दूर समाज के लिए आवश्यक सुधारों को रेंखाकित करते हुए लेखकों के द्वारा एक नये किस्म के लेखन को आंदोलित किया। जो तर्क और विज्ञानं पर आधारित थी और मनुष्यता की वकालत कर रही थी। प्रलेस की स्थापना की उर्जा यूरोप में रह रहे भारतीय साहित्यकारों की उपज थी। जिनपर रसियन साहित्य और रसियन क्रांति का प्रभाव था और यही एकमात्र कारण भी था की सज्जाद जहीर ने इसे भारत में मूर्त करने के लिए अपने आपको समर्पित कर दिया।

प्रलेस की स्थापना के सात साल बाद इप्टा की स्थापना मूल रूप से प्रलेस के मूल्यों को भारतीय रंगमंच के माध्यम से जनता के बीच ले जाने के लिए किया गया। जो सिर्फ साहित्य

ही नही बल्कि संगीत,नृत्य और अभिनय पर आभिजात्य पकड़ को कमजोर करने में सहायक साबित हुई। इसके अलावा इप्टा ने देश की कलाओं को प्राणवान कर उन्हें नवीन बनाया जिसके साथ आम जनता ने संवाद भी स्थापित किया। इप्टा ने प्रलेस की भूमिका को आजाद भारत में सुदूरवर्ती इलाको तक प्रचारित किया। सम्प्रदायवाद और पूंजीवाद के खिलाफ मजदूरों और किसानों के माध्यम से प्रतिरोध को मजबूत करते हुए सत्ता की आलोचना की। जिसे बाद में सिनेमा का भी सहारा मिला। सिनेमा जो पेशेवर रूप से व्यापक पूंजी और मानवीय संसाधन की मांग करता है इसकी भरपाई अथवा पूर्ति भी इप्टा ने की।

अध्याय 4,धरती के लाल से प्यासा का विजय तक

भारतीय सिनेमा के चौथे और पांचवे दशक की फिल्मों के पास राष्ट्रवाद और देशभक्ति के इतर हटकर सोचने और समझने की सहूलियत हासिल हुई। ऐसा उस दौर में सक्रिय फिल्मकारों के राजनैतिक समझ का परिणाम था। देश की आजादी के समय उत्पन्न समस्याओं को उन्होंने बखूबी समझा। जिसका परिणाम यह हुआ की उस दौर का सिनेमा लक्षित वर्ग का सिनेमा या पूंजी बनाने का सिनेमा न रहकर कई मायनों में हाशिये पर खड़े समाज का सिनेमा हो चला।

जिस कथाशैली को आधार बनाकर भारतीय निर्देशकों ने अपनी फिल्में देशभर में प्रदर्शित की वे मनुष्यता को लक्ष्य बनाकर बनाई गई। जिसमें शोषण आधारित समाज की आलोचना की गई (धरती के लाल), जो पूंजी और औद्योगिक हथकण्डो के खिलाफ संगठन बनाकर प्रतिरोध की वकालत की (नीचा नगर), जहाँ औद्योगिक और विकास के मानकों को ग्रामीण परिवेश में लाकर परखने की कोशिस (दो बीघा जमीन) की गई। इसके अलावा विकास को ध्येय मानकर शहरीकरण की अनिवार्यता (जागते रहो) और अंततः पूरे दस साल आजादी की हवा को महसूस कर चुके देश के विघटित मूल्यों (प्यासा) को दिखाया गया।

इन पांचो फिल्मों के इर्द–गिर्द ही उस दौर का सिनेमा रहा। फिल्मों में नायक को साधारण दिखा उस देश के सबसे दरकिनार आबादी के माध्यम से स्वतंत्र के अर्थों को देखने की कोशिश की गई। वाकई स्वतन्त्रता के लाभार्थी कौन लोग हैं इन प्रश्नों की पड़ताल की गई।

साथ ही एक लोकतान्त्रिक देश के अंदर प्रजा या लोक के प्रश्न किस तरह विकास और औद्योगिक योजनाओं के कारण तिरोहित हो रहे इसकी भी विवेचना इस दौर की फिल्मों के द्वारा किया गया।

प्रगतिशील मूल्य, धर्मनिरपेक्षता, समाजवाद, वैज्ञानिक चेतना को जनतान्त्रिक देश में तरजीह देती हुई यह फिल्में शहरों के माध्यम से उत्पन्न हो रहे नवीन मूल्यों और उसके परिणामो को भी रेखांकित करने के लिए प्रयासरत रही। प्यासा के माध्यम से गुरु दत्त ने जो त्रासदी को दिखया वह आज अपने विकराल रूप में हमारे सामने है। देश का शहरी मध्यमवर्ग आज सबसे ज्यादे सवालों के घेरे में है। जिसे देशकाल के राजनैतिक उठापटक के माध्यम से समझा जा सकता है।

अध्याय 5,पर्दा गिरता है

तुलमनात्मक रूप से देखने पर इप्टा के गठन के बाद का सिनेमा राजनैतिक रूप से ज्यादा परिपक्व लगता है। जहां विषयों में एकरूपता नही है। साथ ही इप्टा के कलाकारों द्वारा उसके बाद के सिनेमा की हरेक शैली चाहें वह निर्देशन हो या पटकथा लेखन, गीत हो या संगीत हर विधा में प्रभावित किया है।

इप्टा के गठन से पूर्व तीन दशकों तक सिनेमा समाजिक अंतर्द्वंदों से छटकर पौराणिक–म्यूजिकल–ऐतिहासिक फिल्मों को बनाने में लगा था। वही फिल्म निर्माण में अभिजात्य वर्ग का बोलबाला था। जबकि इप्टा के गठन ने कला की सार्थकता के प्रश्न के साथ फिल्म निर्माण को समाजवादी विचार के साथ जोड़ा।

समाजवादी विचार से तातपर्य है पूंजी पर किसी विशेष व्यक्ति का नियंत्रण न हो। वह समाज की साझी हो। इप्टा के फिल्म निर्माताओं ने इस विचार को सिनेमा में सम्भव बनाया। धरती के लाल इसका उदाहरण है। जहां फिल्म की कहानी से लेकर उसके प्रदर्शन तक कई

वर्गों–विचारों–प्रतिनिधियों द्वारा उसे सम्पादित किया गया। जो टाकीज सिनेमा में आज भी सम्भव नही है।

इप्टा के फिल्म निर्माण ने जिस कामन मैन की कल्पना की और उसे हताश–निराश कर दुनिया से पलायन को मजबूर कर दिया, सातवें दशक में वही विजय एंग्री यंग मैन बन उस समाज की सच्चाइयों का सामना करता है। लेकिन वहां उसके मूल्य प्यासा के विजय से बिल्कुल विपरीत हैं। यह पांचवे दशक का प्रभाव रुमानियत नायक के दौर से लेकर तिलमिलाए नायक तक जारी रहा।

इप्टा ने हिंदी सिनेमा के गीत–संगीत परम्परा को महान विरासत सौंपी। शैलेन्द्र–हसरत–कैफी आजमी–साहिर के गीतों ने हिंदी सिनेमा को एक से बढ़कर एक गीत दिए। जिसकी धुनों ने हिंदी सिनेमा को लोकप्रिय बनाने में कोई कसर नही छोड़ी।